Himalayan Journal of Social Sciences & Humanities
(A Peer Reviewed Journal of Society for Himalayan Action Research and Development)
ISSN: 0975-9891

हिन्दी साहित्य में एकांकी का उद्‌भव और विकास

विमला चमोला
हिन्दी विभाग हे0न0ब0ग0 केन्द्रीय विश्वविद्यालय पौड़ी परिसर

Manuscript Info

Manuscript History

Received: 10.27.2016

Revised: 28.11.2016

कुंजी शब्द–

आवरण, शाश्वत, सघन, सर्ग, संवर्तक,

सारांश–

वैदिक काल से लेकर आजतक मानव पर्यावरण के लिए चिन्तित रहा है। उसे सन्तुलित करने के लिए समयानुसार प्रयास भी करता रहा है। पर्यावरण व्यापकता भरा शब्द है, यह उन सम्पूर्ण शक्तियों, परिस्थितियों एवं वस्तुओं का योग है। जो मानव जीवन को प्रावृत्त करती है तथा क्रियाकलापों को अनुशासित करती है। हमारे चारों ओर जो विराट परिवेश व्याप्त है ऐसे प्रावलम्बी सम्बन्ध का नाम पर्यावरण है। हमारे चारों ओर जो भी वस्तुएं, परिस्थितियां तथा शक्तियां विद्यमान हैं वे सब हमारे क्रियाकलापों को प्रभावित करते हैं और उसके लिए एक दायरा सुनिश्चित करती हैं। इसी दायरे को हम पर्यावरण कहते हैं। यह दायरा व्यक्ति, गांव, नगर, प्रदेश, महाद्वीप, विश्व अथवा सम्पूर्ण सौरमण्डल या ब्रह्माण्ड हो सकता है। इसीलिए वेदकालीन मनुष्यों ने द्युलोक से लेकर व्यक्ति तक समस्त परिवेश के लिए प्रार्थना की है। शुक्ल यजुर्वेद में)षि प्रार्थना की है–**द्यौः शान्तिरन्तरिक्ष** [1] इसलिए वैदिक काल से लेकर आजतक चिन्तकों तथा मनीषियों द्वारा समय–समय पर पर्यावरण के प्रति अपनी चिन्ता को अभिव्यक्त कर मानव जाति को सचेष्ट करते रहे।

हिन्दी साहित्य कोश में एकांकी के स्वरूप की विवेचना इस प्रकार है; आवश्यकता और प्रयोग की दृष्टि से स्पष्ट है कि एकांकी नाटक साहित्य का यह नाट्य प्रधान रूप है जिसके माध्यम से मानव–जीवन के किसी एक पक्ष, एक चरित्र, एक कार्य, एक परिपार्श्व, एक भाव की ऐसी कलात्मक व्यंजना की जाती है कि ये एक अवकल भाव से अनेक की सहानुभूति और आत्मीयता प्राप्त कर लेते हैं।

डॉ0 रामचरण महेन्द्र ने लिखा है–''एकांकी नाटक मानव–जीवन का एक टुकड़ा मात्र है। एक मर्मस्पर्शी झाँकी है। यह जीवन समाज या किसी पात्र के चरित्र की एक झलक भर देता है। चरित्र के किसी पहलु विशेष पर ही प्रकाश डालता है। वह किसी एक महत्वपूर्ण मर्मस्पर्शी घटना से सम्बन्धित होता है। बड़ा नाट्यकार मनुष्य और सामाजिक जीवन की गहराईयों में उतरता है, कई चरित्रों, घटनाओं, परिस्थितियों और भावनाओं पर प्रकाश डालता है, परन्तु एकांकी जीवन और चरित्र पर एक विहंगम दृष्टि डालता है। एकांकी में केवल एक ही घटना होती है। नाटकीय कौशल से विकसित होकर वह चरम सीमा पर पहुँचती है। उसमें कोई अप्रधान प्रसंग नही रहता।''

डॉ0 रामकुमार वर्मा के शब्दों में–''एकांकी में एक ही घटना होती है और वह नाटकीय कौशल से ही कुतूहल का संचय करते हुए चरम सीमा पर पहुँचती है। उसमें कोई अप्रधान प्रसार नही रहता। विस्तार के अभाव में प्रत्येक घटना कली की भाँति खिलकर पुष्प की भाँति विकसित होती है। उसमें लता के समान फैलने की उच्छश्रृंगलता

© SHARAD

नही। जीवन की प्रमुख संवेदना के लिए एक ही पात्र या एक ही परिस्थिति, बादलों की भाँति, नीचे से उटकर घटनाओं के झोंके में ऊपर जाकर चन्द्रमा और सूर्य को ढंकले और चरम सीमा की विद्युत से आलोकित होकर जीवन के सत्य की बूंदों में वरस पड़े।''

नवयुग की किरण ने जीवन के जिस शतदल को पुलकित किया है उसमें एक पंखुड़ी एकांकी नाटक की भी है। आज के युग में साहित्य को जो प्राण रस दिया है, जिस चेतना को मुखरित किया है, हिन्दी का एकांकीकार उसी का सर्वाधित प्रबुद्ध और जागरूक कलाकार है। आज के यत्रवत् जीवन की व्यस्तता के बीच मानव मन अपने अवकाश के कुछ क्षणों को अधिकतम आनन्द की उपलब्धि प्रदान कर सके, इस युग सत्य को स्वीकार कर एकांकी विद्या ने साहित्य के परिवार में अपना विशिष्ट मौलिक और स्वतंत्र अस्तित्व बना लिया है। इस विद्या ने अपनी अल्पायु में जिस प्रगति और ख्याति का अर्जन किया है वह कल्पनातीत है। भाव और शिल्प की नित नई साजसज्जा, नित नया रूप सौन्दर्य और नित नई वेश–भूषा के लेकर उसका स्वरूप प्रकट हो रहा है। ऐसी विविध रूप धारणी एकांकी कला को एक निश्चित परिभाषा की सीमा में बाँधना कठिन है। जैसे कोई चतुर चितेरा विहारी की नायिका के क्षण–क्षण परिवर्तनशील सौन्दर्य का छवि अंकन नही कर सकता, उसी प्रकार एकांकी कला का स्वरूप निदर्शन भी कठिन है। फिर भी साहित्य के पण्डितों ने अपनी परिभाषाओं द्वारा एकांकी के स्वरूप का निर्धारण का प्रयत्न किया है।

परिभाषा :–

अपने शाब्दिक अर्थ में एकांकी एक अंक का नाट्य रूपक है। यह एक अंक दृश्य लिए भी हो सकता है और अनेक दृश्यों से समन्वित भी। परन्तु यह एक अंक वाला तथ्य एकांकी कलेवर से सम्बन्धित है, उसके स्वरूप का दिग्दर्शन नही। एक अंक का नाटक कहने मात्र से एकांकी की विशिष्टता और उसके मौलिक रूप की प्रतीति नहीं होती। एकांकी नाटक की अपनी निजी विशेषताएँ हैं जो उसे नाटक तथा अन्य साहित्यिक विधाओं से पृथक बनाती है।

प्रसिद्ध पाश्चात्य समीक्षक **सिडनी बक्स** के अनुसार– ''एकांकी साहित्य की वह नियंत्रित और संयमित विधा है जिसमें एक ही घटना को इस प्रकार अभिव्यक्त किया जा सकता है कि उसके प्रभाव एक्य से पाठकों और दर्शकों का मन आक्रांत और आकृष्ट हो जाता है।''

पिकर्ड ईटन नामक विद्वान ने एकांकी की प्रकृति पर प्रकाश डालते हुए लिखा है–''उसमें किसी विशेष समस्या, किसी विशेष परिस्थिति अथवा घटना का इस प्रकार नियोजन करना पड़ता है कि वह अपने आप की विकसित हो जाए।''

एकांकीकला की भाषाओं और स्वरूप सक उसकी विशेषताओं पर महत्वपूर्ण निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं। जैसे–एकांकी की मूल आत्मा उसकी संक्षिप्तता है। उसमें मानव–जीवन की केवल एक घटना, एक विचार, एक अनुभूति, एक परिस्थिति, एक समस्या का की चित्रण होता है। सम्पूर्ण मानव–जीवन की घटनावली उसमें नहीं होती है। फलतः एकांकी में विस्तार नही होता, फैलाव नही होता, अपितु गहनता और सीमितपन का भाव होता है। एकांकी एक सुनिश्चित, सुकल्पित लक्ष्य लिए रहती है। इस लक्ष्य की और उसकी गति बड़ी क्षिप्त होती है, निर्झर की प्रसन्न वेग की तरह वह फूटती है। गति में भी एकता, एकाग्रता और आकस्मिकता होती है। एकांकी एक कथानक सुगठित, सन्तुलित, सरल वेग पूर्ण आकर्षक और कसा हुआ होता है। वह घटनाओं का ऐसा गुंठित रूप होता है, जिससे किसी प्रकार का विखराव नही होता। एकांकी के प्रारम्भ के लिए किसी प्रकार की भूमिका का निर्माण नही किया जाता उसका प्रारम्भ तुरन्त होता है। एकांकी के शिल्प–विधान का यही सबसे बड़ा आकर्षण है। एकांकी में कुतूहल और जिज्ञासा का भाव उसके आवश्यक गुण है, संघर्ष और अन्तर्द्वन्द्व उसके प्राण है। यह संघर्ष और अन्तर्द्वन्द्व की लीक पर गतिशील जिज्ञासा और कुतूहल का सम्बल लिए एकांकी की अनुभूति चरम सीमा पर पहुँचती है और वही अवसान का रूप ग्रहण करती है। अतः प्रारम्भ की भाँति एकांकी का अन्त भी आकस्मिक होता है। एकांकी के लिए आवश्यक नहीं कि उसमें नायक–प्रतिनायक, खलनायक, नायिका, प्रतिनायिका की अवतारणा की जाए एक पात्र प्रमुख हो, दूसरे पात्र गौंण, पर पात्रों की संख्या अधिक न हो, एकांकी तो एक पात्रीय भी होते हैं।

© SHARAD

एकांकी की रचना एक अंक लिए रहती है। एक अंक में एक दृश्य भी हो सकता है और अनेक दृश्य भी परन्तु अंक और उसके दृश्यों में लघिवता का गुण होना आवश्यक है। एकांकी ऐसा हो जो एक ही बैठक में एक ही समय समाप्त हो सके। बीस मिनट से अधिक समय एकांकी का नही होना चाहिए। एकांकी मूलतः मानव–जीवन के मर्म का उद्घाटन करने वाली विद्या है। वह साहित्य की ऐसी विद्या है जहाँ मानव–चरित्र की अनुभूति, युग की चेतना, जीवन की भावधारा एक बिन्दु पर केन्द्रित होकर अभिव्यक्त होती है। मनोरंजन मात्र की एकांकी का लक्ष्य नहीं होता। मानव–जीवन की भावभूमि की दृढ़ और सफल बनाने का आग्रह भी उसमें निहित है। अतः एकांकी एक ऐसी संक्षिप्त नाट्य रचना है जो पात्रों के माध्यम से अभिनयात्मक होती है। उसकी रूपरेखा पूर्णतः स्पष्ट और सन्तुलित होती है तथा वह अपने आप में पूर्ण होती है। एकांकी की यह कला जीवन की प्रति छाया है। उसमें सम्पूर्ण मानव–जीवन का नही, अपितु मनुष्य के चरित्र का एक ही प्रसंग, एक ही रूप चित्रित किया जाता है। उसमें एक ही चरित्र अथवा स्थिति द्वारा अनेक भावों का चित्रण रहता है।

मानव–जीवन की जिस झलक या झाँकी को एकांकी प्रस्तुत करता है, वह झाँकी क्षणिक परन्तु प्रभावपूर्ण होती है। मेघाछन्न आकाश में जैसे बिजली चमक उटती है। अपनी त्वरा और आकस्मिकता से मानव मन को विस्मित, चकित कर देती है, उसी प्रकार एकांकी कला भी बिजली की सी त्वरा चमक लिए मानव–जीवन की अनुभूति की तीव्रतम रूप में प्रकट करता हुआ मानव मन को अभिभूत करती है। एकांकीकार केवल एक ही दृश्य पर अपना सारा आलोक केन्द्रस्थ कर उसके प्रभाव को तीव्रतम बना देता है उसका कार्य धनुर्विद्याविशारद वीर अर्जुन की भाँति होता है जो अपने निशाने को अचूक बताने के लिए चिड़िया की आँख को लक्ष्य कर तीर छोड़ता है। चिड़िया के अन्य अंगों की ओर जिसका ध्यान नही जाता।

वास्तव में एकांकी कला मानव–जीवन के उपवन में खिले हुए फूलों की एक मुस्कान है, मानव मन के संगीत की एक रागिनी है, युगधारा के सतत् प्रवाह की एक तरंगिनी है। नाट्यकला वस्तुतः साहित्य जगत की अत्यन्त महत्वपूर्ण विद्या है। काव्यकला **'काव्येषु नाटकं रम्यम्'** के आधार पर नाट्यकला ही सर्वश्रेष्ठ मानी गई है कारण भी स्पष्ट है। हृदयगत भावों को व्यक्त करने की जैसी अपूर्व क्षमता नाटकों में रहती है, वैसी शक्ति साहित्य की अन्य विधाओं में नही रहती। नाट्कला का व्यापक और स्थायी प्रभाव पड़ता है तथा वह मनुष्य के आभ्यन्तरिक और बाह्य दोनों रूपों का अधिक स्पष्टता के साथ उद्घाटन करती है। यही नही नाटक मानव–जीवन और समाज के बहुत अधिक निकट है। कविता, उपन्यास, कहानी पाठक के सम्मुख कल्पना द्वारा समाज के चित्र को प्रस्तुत करते हैं, किन्तु नाटक शब्द पात्रों की वेश–भूषा, उनकी आकृति, भाव–भंगी क्रियाओं के अनुकरण और भावों के अभिनय तथा प्रदर्शन द्वारा दर्शक को समाज के यथार्थ जीवन के निकट ला देते हैं। नाटक वास्तव में जन–जीवन का सच्चा साहित्य है। उसमें लोकहित और लोकरंजक की अद्भुत क्षमता है। साहित्य के अन्य अंग एक साथ एक बैठक में, एक निश्चित समय के भीतर इतने भारी जन समूह को आनन्द मग्न नहीं कर सकते, जितने भारी जन–समूह को नाटक अपनी कला द्वारा रसप्लावित कर सकता है।

सन्दर्भ–सूची–

1– हिन्दी एकांकी संग्रह आलोचनात्मक अध्ययन–रमेशचन्द्र कुलश्रेष्ठ एवं शंकर द्विवेदी
2– हिन्दी साहित्य कोश– आचार्य रामचन्द्र शुक्ल
3– डॉ0 रामकुमार वर्मा– चारूमित्रा
4– डॉ0 गोविन्द चातक–प्रसाद के नाटक सर्जनात्मक धरातल और भाषिक चेतना
5– जयदेव तनेजा–हिन्दी रंगकर्म

******

© SHARAD